RNI : 66866/97

विश्व दीप दिव्य सन्देश

(मासिक शोध पत्रिका)

संरक्षक : सार्वभौम जगतगुरु, महामण्डलेश्वर परमहंस योगीराज श्री स्वामी महेश्वरानन्द जी

वर्ष–23 विक्रम संवत् – 2076 (नवम्बर–2019) अंक–6

प्रकाशक

विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान

(जगद्गुरु रामानन्दाचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध)

कीर्ति नगर, श्याम नगर, सोढाला, जयपुर

RNI : 66866897

विश्व दीप दिव्य संदेश

(मासिक पत्रिका)

वर्ष – 23 | विक्रम संवत् – २०७६ | अङ्क–6 | नवम्बर, 2019

* प्रमुख संरक्षक *

परम महासिद्ध अवतार श्री अलखपुरी जी

परम योगेश्वर स्वामी श्री देवपुरी जी

* प्रेरणास्रोत *

भगवान् श्री दीपनारायण महाप्रभुजी

* संस्थापक *

परमहंस स्वामी श्री माधवानन्द जी

* संरक्षक *

सार्वभौम जगद्गुरु महामण्डलेश्वर परमहंस विश्वगुरु स्वामी श्री महेश्वरानन्द जी

* परामर्शदाता *

पण्डित अनन्त शर्मा

डॉ. नारायणशास्त्री काङ्कर

* प्रधान संपादक *

महामण्डलेश्वर स्वामी ज्ञानेश्वर पुरी

* संपादक *

सोहन लाल गर्ग

डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

* सह–संपादक *

डॉ. रामदेव साहू

डॉ. रघुवीर प्रसाद शर्मा

तिबोर कोकेनी

श्रीमती अन्या वुकादिन

* सहयोग *

डॉ. योगेश कुमार, नवीन जोशी

प्रकाशक

विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान

(जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध)

कीर्ति नगर, श्याम नगर, सोडाला, जयपुर

website : vgda.in, Youtube : www.youtube.com/c/vishwagurdeepashram

Email : jaipur@yogaindailylife.org

अनुक्रमणिका

	सम्पादकीय		3
1.	वैदिक सृष्टिविज्ञान का विवेचक ग्रन्थ : एक समीक्षण	देवर्षि कलानाथ शास्त्री (राष्ट्रपति सम्मानित)	5
2.	रामायण : कतिपय प्रामाणिक तथ्य	डॉ. ताराशंकर शर्मा 'पाण्डेय'	15
3.	संस्कृत वर्णमाला	डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा	24
4.	हस्तविद्याया: प्रमुखता	डॉ. सीमा शर्मा	26
5.	सत्य सपथ करुणानिधान की	रामशंकर गौड	29
6.	विवशता	नवीन जोशी	32

टाईप सेटिंग एवं मुद्रण : **आइडियल कम्प्यूटर सेन्टर**,3580 मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर ✻ मो. 9829028926

सम्पादकीय

विश्व गुरुदीप आश्रम शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित मासिक शोध पत्रिका का चतुर्थ पुष्प आपके कर कमलों में देते हुए अत्यधिक हर्ष का अनुभव हो रहा है। इस मासिक पत्रिका के तीन अंक पूर्व में प्रकाशित हो चुके हैं। भारतीय धर्म संस्कृति के शोध लेखों का यह संग्रह विद्वानों द्वारा सराहा जा रहा है। नियमित विद्वानों द्वारा भेजे जा रहे शोध लेख हमारा मनोबल बढा रहे हैं व पत्रिका के महत्त्व को भी आलोकित कर रहे हैं। पूर्व अंकों में सभी उच्चस्तरीय विद्वानों के लेख प्रकाशित हुए हैं व शोध संस्थान द्वारा किये गये कार्यक्रमों के चित्र सहित विवरण प्रकाशित किया गया है।

प्रकाशन की इसी परम्परा में कुछ नये आयामों को और जोड दिया गया है, जिसमें संस्था, विद्यावाचस्पती समीक्षाचक्रवर्ति पं. मधुसूदन ओझा के अप्रकाशित साहित्य को सानुवाद प्रकाशित करने का कार्य भी कर रहा है।

प्रत्येक रविवार को अन्तर्राष्ट्रिय वैदिक संस्कृति व्याख्यानमाला की शुरुआत पिछले एक वर्ष से हो रही है। विश्वस्तरीय विद्वानों द्वारा अति महत्वपूर्ण व्याख्यानों का प्रकाशन व प्रसारण भी किया जा रहा है। विभिन्न संगोष्ठी सेमीनार व जन्ममहोत्सवों के आयोजन अवसर पर किये गये संस्था द्वारा कार्य प्रकाशन, प्रसारण की सम्पूर्ण सूचनार्थ प्रत्येक माह इस पत्रिका के माध्यम से सुधीजनों तक पहुँचाने का यथासम्भव कार्य हमारे द्वारा किया जा रहा है।

इस अंक में प्रकाशित समस्त लेख प्राच्यनक विद्वानों का एक संगम है। आशा है सुधीजन इस ज्ञान गंगा का पान पूर्ण मनोयोग के साथ करेंगे।

आप सभी को शुभकामना व आगामी लेखों के लिए आग्रह के साथ।

–सम्पादक

मासिक रिपोर्ट (विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर)

(नवम्बर-2019)

कार्यक्रम	शिविर	कार्यशाला	प्रकाशन	व्याख्यान-प्रस्तोता-दिनांक-विषय
कालिदास जयन्ती महोत्सव – 24.11.2019			**ज्योतिषचक्रम** (भूगतिविचार) – लेखक पं.मधुसूदन ओझा, संपादक- डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा **वेदपुराणअनुशीलनम्** – लेखक : पं. अनन्त शर्मा	प्रो. अनन्त शर्मा – व्याख्यानमाला – 17.11.2019 – अहम् वेदः अस्मि। प्रो. अनन्त शर्मा – व्याख्यानमाला – 24.11.2019 – कालिदास त्रयी वैभव

वैदिक सृष्टिविज्ञान का विवेचक ग्रन्थ : एक समीक्षण

महामहोपाध्याय देवर्षि कलानाथ शास्त्री (राष्ट्रपति सम्मानित)

वेदों में ब्रह्माण्डविज्ञान, सृष्टिविज्ञान आदि के वैज्ञानिक तथ्य विवेचित है यह बात आज के आधुनिकतम वैज्ञानिकों ने भी मानी है। वेदविज्ञान पर विस्तृत, प्रणालीबद्ध और सर्वाङ्गीण विवेचन प्रस्तुत करने वाली ग्रन्थावली सर्वप्रथम जयपुर के वेदमनीषी पं. मधुसूदन ओझा ने बीसवीं सदी के प्रारंभ में लाखों पृष्ठों में शतशः ग्रन्थों द्वारा प्रसारित की जिसका अनुवर्तन म.म.पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, पं. मोतीलाल शास्त्री, कर्पूरचन्द्र कुलिश, सुरजनदास स्वामी आदि जयपुर के विद्वानों ने ग्रन्थ लिखकर किया। आज भी डॉ. अनन्त शर्मा, डॉ. दयानन्द भार्गव, गणेशीलाल सुथार आदि वेदविज्ञान पर कार्यरत हैं। जयपुर के देश विख्यात पत्रकार, अंग्रेजी पत्रकारिता के शिखर पुरुष, वेद मनीषी श्री ऋषिकुमार मिश्र (1932-2009) ने दिल्ली में रहते हुए अनेक वर्षों के मन्थन के बाद वेदविज्ञान के समूचे सिद्धान्तों के निष्कर्षों पर एक विश्व कोषात्मक अंग्रेजी ग्रन्थ प्रकाशित किया जिसका अध्ययन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसी का एक समीक्षण यहां प्रस्तुत है।

Before the Beigning and after the End नामक ग्रन्थ उसी लेखक के सुदीर्घ अध्ययन, मनन और निदिध्यासन का विवेक संमत निष्कर्षों के साथ परिमार्जित और परिपक्व शैली में, सुदृढ़ और परिष्कृत अंग्रेजी भाषा में प्रस्तुत बहुआयामी भारतीय विद्या और वेदविज्ञान की अन्तर्दृष्टि का ज्ञान कोष है जिसने पहले तो एक लम्बे कालखंड में अंग्रेजी और हिन्दी पत्रकारिता में विपुल कीर्तिमान बनाए फिर पारंगत मनीषियों के सान्निध्य में प्राच्य विद्याओं का अध्ययन किया, देश की राजनीति में भी एक जननेता के रूप में भाग लिया और अन्त में समूचे अध्ययन और मनन का निष्कर्ष सुगठित तथा सारगर्भित शैली में नवनीत के रूप में संजोकर इन छह (6) सौ पृष्ठों में रख दिया। अंग्रेजी के पाठक इसे देखते ही समझ जाएँगे कि इसकी भाषा परिमार्जित और विशुद्ध है, ज्ञान-विज्ञान के निष्कर्ष प्रस्तुत करने की शैली भी परिपक्व है।

ईश्वर - वैदिक विज्ञान के अनेक शब्द ऐसे हैं जिनका सर्वांगपूर्ण पर्याय अंग्रेजी में बनाना संभव नहीं है। ऐसे स्थलों पर लेखक ने मूल संस्कृत शब्द लिखकर उसका अन्तर्निहित अर्थ स्पष्ट किया है। जिस संदर्भ में जिस शब्द की जो अर्थछाया अंग्रेजी में बनती है वह बताई है। अलग अलग संदर्भो में अनेक शब्दों के अलग अलग पर्याय होंगे ही। इसका एक दिलचस्प उदाहरण लेखक ने प्रथम अध्यय में ही स्पष्ट कर दिया है कि ईश्वर जैसे शब्द का भी अब तक पूरी तरह सही पर्याय नहीं आ पाया है। लेखक के शब्द हैं

The word 'Ishwara' has been rendered into English as 'God' Sir Monier Monier Williams translates Ishwara as master, lord, prince and God. The supreme Being. Such a translation is one of many examples of the superimposition of their own reli gious and mental constructs on the Vedas by Christain commentators. (P.10). जहाँ लेखक ने सृष्टि विद्या के प्रसंग में ईश्वर का विवेचन किया है वहाँ मूल शब्द देकर ही पर्याय दिया है, वहाँ वह प्रजापति है। जहाँ जीव, ईश्वर और परमेश्वर के रहस्यों का विवेचन है वहाँ मूल शब्द ही प्रयुक्त है। इसी प्रकार आत्मा का पर्याय Soul सब जगह सही थौड़े ही बैठ सकता है। ऐसे सभी अवसरों पर मूल शब्द देकर तात्पर्य स्पष्ट किया गया है जैसे कहीं आत्मा Soul है, आत्मा Body है पर अन्यत्र आत्मा Body के अर्थ में भी मिल जाएगा। (पृ. 69) यही कारण है कि अन्य पुस्तकों की तरह इसमें परिशिष्ट के रूप में Glossary या पर्यायसूची (अंग्रेजी से संस्कृत) देने की नौबत नहीं आई। वह आवश्यक थी ही नहीं। विवेचन सभी स्थलों पर सांगोपांग और स्वतः पूर्ण है। यह इस ग्रन्थ की एक विशेषता है। इससे वेद विज्ञान के रहस्यों के अवगम में भ्रान्ति की संभावना नहीं रहती अन्यथा अनेक ऐसे शब्द हैं जिनके पर्याय प्रयुक्त हों तो भ्रान्तियों की बाढ़ आ जाए जैसे 'रस' बैल' 'वाक्' 'विवर्त' 'आगम' 'साम' आदि।

मूल शब्द जिस अर्थ में प्रयुक्त है उसे अंग्रेजी में वहीं समझा दिया गया है। अतः अन्त में मूल संस्कृत शब्दों का अंग्रेजी में समझाते हुए Glossary परिशिष्ट में दी गई है जो सभी के लिए हितकर सिद्ध होगी। अस्तु।

विज्ञान - आज सृष्टि के उद्गम और विकास के बारे में वैज्ञानिकों की जो स्थापनाएँ एवं धारणाएँ हैं उन्हें लेकर भारतीय चिन्तन में उनका उत्स बताने की अनेक लहरें चल रही हैं यह हम सभी जानते हैं। बिग बैंग थ्योरी से लेकर एक्सपैंडिंग यूनिवर्स अथवा यूनीफाइड फील्ड थ्योरी को भी वेदों में मूल रूप से निहित बताया जाता है। आईन्स्टीन की थ्योरी ऑव रिलेटिविटी को भी। लेखक स्वयं व्यापक अध्ययन का धनी रहा है। अतः इन सभी चिन्तनधाराओं का संकेत अपनी भूमिका में देकर यह कह दिया गया है कि इन सबका समानान्तर चिन्तन जहाँ वेदों में उपलब्ध होता है, उसका संकेत कर दिया जाएगा। इससे चिन्तन की परिपक्वता प्रमाणित होती है। वेदों के, कालनिर्णय के बारे में तथा वेदों की व्याख्या करने के बारे में जहाँ पाश्चात्य विद्वानों की अपरिपक्वता एवं असंगति स्पष्ट है। वहाँ निर्भीक एवं वस्तुनिष्ठ शैली में लेखक ने स्पष्ट कर दिया है कि दुर्भाग्यवश उनकी दिशा ही कुछ और थी अतः उनके निष्कर्ष भी अप्रासंगिक रहे। आज वे स्वतः निरस्त हो गए हैं। वे मजहब को ढूँढ रहे थे जबकि वेदों में मजहब नहीं विज्ञान है।

विज्ञान क्या है इस पर विद्वानों ने अनेक व्युत्पत्तियाँ दी हैं- विशिष्टं ज्ञानं, विरुद्धं ज्ञानं, विविधं ज्ञानं विज्ञानम् आदि। मिश्र जी बड़े सहज ढंग से इसे समझाते हैं-विज्ञान है Variety of Knowledge

and also Knowledge of Variety (xvii) भूमिका में वे न्यूटन, आईन्स्टीन आदि से लेकर वर्तमान स्टीवन हाकिन्स तक के सिद्धान्तों का जिक्र करते हैं, वरिष्ठ पत्रकार तथा अंग्रेजी के शिखर स्तर के लेखक होने के कारण आधुनिकतम वैज्ञानिक स्थापनाओं की जानकारी उन्हें होना स्वाभाविक ही था। अतः वे नवीनतम स्थापनाओं को वेद में खोजने की चकाचौंध में न पड़कर वेदों से लेकर शास्त्रों तक में ज्ञान विज्ञान के जो सिद्धान्त स्थापित हैं उन्हें अंग्रेजी में ओझाजी और मोतीलाल शास्त्री के अभिगम के अनुरूप समझाने का कार्य करते हैं। इस समझाने में उनका अपना मौलिक विवेक अनेक स्थानों पर सर्वोपरि भूमिका अदा करता है। यह ग्रन्थ के गहन विश्लेषण से स्पष्ट हो सकता है।

इस प्रकार यह ग्रन्थ अनेक शास्त्रीय सिद्धान्तों और वेद में संकेतित वैज्ञानिक रहस्यों का (जो सही निर्वचन के अभाव में, दूसरे शब्दों में ठीक तरह से Decode न किये जाने के कारण अनसुलझे रह गये थे)। समग्रीकृत अध्ययन या निष्कर्ष है, Digest है जिसमें प्रत्यायकता है, वह Convincing है क्योंकि वे अंग्रेजी भाषा में सुलझी शैली में प्रस्तुत किये गये है। इसीलिये इसे नाम दिया गया है Re-discovering Ancient Insihghts beyond the Universe of Physics आवश्यकता इस बात की है कि इसमें वर्णित विविध क्षेत्रों के सिद्धान्तों पर उनके मूल पाठों को साथ लेकर शोध और अध्ययन हो, संवाद और विश्लेषण हो जिससे इनका महत्त्व स्पष्ट हो सके।

मन, प्राण और वाक् – वेद विज्ञान की जिस धारा को मिश्रजी ने इस ग्रन्थ में विवेचित किया है उसकी कुछ विशेषताएँ अन्य विज्ञान चिन्तन धाराओं से उसे अलग करती हैं। उदाहरणार्थ सामान्य जन के मानस में ऋषि शब्द से जटाजूट धारी या मन्त्रद्रष्टा मनीषी का चित्र उभरता है। और पितरों का अर्थ हमारे दिवंगत पूर्वजों से समझा जाता है। जिनके लिए पिण्डदान आदि होता है। किन्तु सृष्टि प्रक्रिया के विज्ञान चिन्तन में जो मूल तत्त्व सृष्टि का आरम्भ करते हैं। उन्हें प्राण कहा जाता है। प्राण में ज्योंहि पहली गति प्रारम्भ होती है वह ऋषि प्राण कहा जाता है जो एकल या एककल होता है। जब उसमें कोई दूसरी कला संयुक्त हो जाती है वह पितृप्राण कहलाता है। इसी प्रक्रिया से सारी सृष्टि उद्विकसित होती है। फिर देव प्राण उद्विकसित होते हैं फिर असुर, दानव, मानव आदि। यह ओझा जी और पंडित मोतीलाल शास्त्री जी ने विस्तार से समझाया है। इसे प्रारम्भिक अध्याय में मिश्र जी ने स्पष्ट करते हुए संक्षेप में इस रूप में समझा दिया है कि प्राण जिसे सुप्रा फिजिकल इनर्जी (Supraphysical Energy) कहा जा सकता है मूल रूप में ऋषि प्राण हैं (Compound) होते ही पितृप्राण कहलाते हैं। उन्होंने शतपथ ब्राह्मण की वही व्युत्पत्ति उद्धृत भी कर दी है (पृ. 47)। 'ऋषति गच्छति इति ऋषिः'। ज्यों ही गति उत्पन्न हुई (जिसे गायत्री प्राण कहा गया है) ऋषि प्राण स्पन्दित होने लगा। फिर मिश्रित होकर पितृप्राण बना। अंग्रेजी की इन संज्ञाओं से सामान्य पाठक इस सिद्धान्त का आशय समझ जाता है।

इसी प्रकार सृष्टिप्रक्रिया प्रारम्भ होने पर उसके जो घटक हैं उनका विवरण देकर लेखक आज

के पाठक के लिए हृदयंगम होने वाली भाषा में भी उसे समझाता है। सारी सृष्टि के तीन घटक मन, प्राण, वाक् स्पष्ट हैं। उन्हें हजारों वर्षों से वेद, शतपथब्राह्मण आदि अपनी पारिभाषिक संज्ञाओं से समझाते रहे हैं। मिश्रजी. ने वह सारा विवरण देकर सरल रूप में यों समझा दिया है। In this way we encounter three elements or factors in the universe and in every object constituting the universe. We could also describe them as three dimensions of a single object. To summarise, they are : 1 knowledge or awareness; 2 Action, function or motion and 3. Matter of substance. (p. 37)

इस विवरण से मन, प्राण और वाक् की वेदविज्ञान सम्मत परिभाषा सरलता से समझी जा सकती है। वाक् का यहाँ वाणी से कोई लेना देना नहीं है जैसा भाषाविद् सामान्यतः समझते हैं। वेद विज्ञान में वाक् ठीक वही तत्त्व, है जिसे मैटर या सबस्टेंस शब्दों से तत्काल समझा जा . सकता है।

आगम, रस और बल - पारिभाषिक संज्ञाओं के अंग्रेजी अनुवाद में सतर्कता बरतना इसलिए भी.. आवश्यक है कि सहस्राब्दियों से संस्कृत भाषा विभिन्न शास्त्रों की विभिन्न अभिव्यक्तियों के लिए शब्द देती आ रही है। बहुधा एक ही शब्द विभिन्न सन्दर्भो में अनेक अर्थ देता है। व्याकरण में संहिता का अर्थ दूसरा है वेद की संहिता बिल्कुल अलग। ऐसा ही एक दिलचस्प उदाहरण मिश्र जी ने दिया है कि संस्कृत के आगम शब्द के लिए अंग्रेजी अनुवाद किस प्रकार विभिन्न होंगे। निगम और आगम में आगम का अर्थ कुछ और है Agama facilitates the gaining of knowledge. In his Sanskrit-English Dictionary (1990), SirMonie Monier-Williams gives the meaning of Agama as Coming near, approaching appearence or reappearance, income lowful acquisition of property, acquisition of knowledge, Science, Collection of such Doctrines, sacred work, anything handed down and fixed by tradition etc. यह तो हुआ हमारा आगम अर्थात् शास्त्र। व्याकरण में आगम और आदेश शब्द बिल्कुल अलग अर्थों में आते हैं। वे भी मिश्र जी ने उद्धृत किये हैं। - Meaningless syllable or letter inserted in any part of the radical word फिर अपनी ओर से आगम की स्पष्ट व्याख्या भी दी है कि किस प्रकार गुरुमुख से विद्या का सम्प्रदाय आगम कहा गया है और यह भी बताया है कि इसके अनुवाद किस प्रकार अलग अलग तरह से किये गये हैं (पृ. 360-61)।

वेद विज्ञान की पारिभाषिक संज्ञाओं में इसी प्रकार के तीन शब्द हैं रस, बल और अभ्व। इन्हें अलग अलग प्रसंगों में बड़े रहस्यात्मक ढंग से समझाया गया है और सामान्य शास्त्र के अर्थों से अलग अर्थों में ये प्रयुक्त होते हैं। अतः इन्हें समझाने के लिए मिश्र जी ने अलग अलग अध्यायों में अनेक पृष्ठ लिखे हैं। वस्तुतः 'सुख' 'आनन्द' और 'रस' पर्याय से लगते हैं किन्तु इन्हें बिल्कुल अलग अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। आनन्द, विज्ञान, मन प्राण और वाक् की पाँच कलाओं वाला आनन्द अलग है। इसे Total Tranquillity utter stillness of the universe आदि शब्दों से समझाया गया है। सुख Plea-

sure है ही सूप्रा फिजिकल एनर्जी की वह स्थिति जिसमें गति नहीं है, रस है, रस में जब शक्ति और गति आती है तब बल उद्भूत होता है बल से वह पदार्थ परिणत होता है जिस अभ्व कहते हैं। From the collision of Balas a new state of supraphysical energy emerges, known as Abhwa. Just as oil comes out of oilsseds or as butter comes from curd so does the latent Bala emerge from Rasa to in another way, which Balas merge or clash with each other a new individual arises and this is Abhwa.

आभु और अभ्व – आभु और अभ्व इसी प्रकार की अल्पज्ञात किन्तु विज्ञान और दर्शन में प्रयुक्त संज्ञाएँ हैं जिनका विवरण मिश्रजी ने स्थान-स्थान पर दिया है। पं. मधुसूदन ओझा ने संशयतदुच्छेदवाद में आभु और अभ्व को समझाने के लिए उपजाति छन्द में अनेक पद्य लिखे हैं–

दिग्देशकालैरभितं तु यत्तज्ज्ञानं हितद् द्रष्ट्र तदाभुविद्यात्।
आनन्द आदावथ चेतनान्या सत्तातृतीयेति तदाभुरूपम्।
तत्कर्मतदूपमथास्यनामेत्येतत् त्रयं त्वभ्वमिति ब्रुवन्ति।

ज्ञान जो ज्ञाता है आभु है, ज्ञेय जो कर्म है, पदार्थ है अभ्व है। ज्ञान (अमूर्त) है, दिक् देश काल में बंधा (दृश्य) नहीं है किन्तु पदार्थ, कर्म दृश्य हैं। ज्ञान आभु है ज्ञेय अभ्व है इसी गुत्थी को मिश्र जी ने बड़े सरल ढंग से समझाया है। Brahman (ब्रह्म) is of to kinds Abhu and Abhwa the one who sees (The seer) is called Abhu and that which is seen (The seer) is Abhwa. संशयतदुच्छेदवाद उस समय अल्पज्ञात था। मोतीलाल शास्त्री कभी कभी अपने व्याख्यानों में उसकी चर्चा करते थे। यहाँ मिश्र जी ने उसका कथ्य संक्षेप में समाहित कर दिया।

ब्रह्म वस्तुस्थिति और रहस्य – आज सामान्यतः भारतीय चिन्तन में सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन करने वाली जो अवधारणाएँ हैं वे उपनिषदों में वर्णित सृष्टि प्रक्रिया चिन्तन अथवा गीता और मनु द्वारा वर्णित प्रक्रिया विवरण से जन्मी है। औपनिषद चिन्तन एक उसी परम सत्ता से सृष्टि का उद्भव मानता है जिसे ब्रह्म कह लें या किसी और नाम से बतायें। जो मूलतः चिद्रूप हैं आत्मा से आकाश, आकाश से वायु, फिर अग्नि फिर जल फिर पृथ्वी। तस्माद्वा एतस्मादात्मन् आकाशः सम्भूतः, आकाशात् वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथ्वी' तैत्तिरीयोपनिषद् (2/1/1) की प्रसिद्ध उक्ति है। मनु भी कहते हैं –

अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत्।

यह सृष्टि प्रक्रिया स्वयंभू भगवान् ने प्रारंभ की।

उपनिषदों से पूर्ववर्ती वेदों का चिन्तन कुछ विभिन्न था। वेदों में सृष्टि प्रक्रिया अनेक सूक्तों में विस्तार से वर्णित है। जिनमें नासदीय सूक्त, अस्यवामीय सूक्त आदि प्रसिद्ध हैं। एक वर्ग इन्हें 'भावसूक्त' कहकर पुकारता है। भाव अर्थात् सृष्टि। नासदीयसूक्त कहता है 'नासदासीन्नो सदासीत्तदानीम्' जब कुछ

भी नहीं था तब क्या था? न असत् था न सत् था। यह क्या था इस पर जो चिन्तन हुआ उसके आधार पर पं. मधुसूदन ओझा ने दश वादों की उद्भावना की। यह सुविदित है पहले केवल अन्धकार था इस पर तमोवाद बना। केवल जल था इस पर अम्भोवाद।

इस प्रकार दशवाद रहस्य लिखे गये किन्तु जो चिन्तन दर्शन प्रस्थान में उद्भूत था उसे नकारना किसी विद्वान् के वश की बात नहीं थी। अतः अन्ततोगत्वा यह कह दिया गया कि ब्रह्मवाद या ब्रह्मसिद्धान्त ही ओझा जी का सिद्धान्तपक्ष है यह सब जानते हैं। हम सबको यह सप्रणति मान्य कर ही लेना चाहिए।

यहाँ केवल वस्तुस्थिति ज्यों की त्यों रखने की दृष्टि से यह उल्लेख नहीं होगा कि पाश्चात्त्य एवं नवीन शोधकर्ताओं का एकमत यह है कि ब्रह्मवाद या एकमात्र सत्ता ब्रह्म की मानने वाली अवधारणा संहिताकाल में नहीं थी। वेदों में ब्रह्मन् शब्द उस परम सत्ता के वाचक के रूप में है ही नहीं जो वेदान्त ने स्थापित की थी। यह परवर्ती काल अर्थात् संहितोत्तरकाल में उपनिषद् की देन है, आरण्यकों से शुरू होता है। सनातनी भक्तिकाल के शिखर विद्वान् इसका विरोध करते हैं कि यह सब पाश्चात्यों का बहकावा है। ब्रह्म तो पहले से ही था। इसका एक दिलचस्प प्रसंग इस प्रकार उद्धृत किया जाता है कि ऋग्वेद के. विश्वकर्मा सूक्त में सृष्टि विद्या की आधारभूत पहेली वेद इस प्रकार प्रस्तुत करता है।

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद् यद्ध्यतिष्ठत भुवनानि धारयन्।। (ऋ. 10/81/4)

बड़ा मासूम सा सवाल है यह पृथिवी आकाश सारा ब्रह्माण्ड कैसे बन गया, किसने तराशा इसे? किस जंगल से वह पेड़ आया जिससे सारी दुनियाँ का महल गढ़ दिया गया?

इसके उत्तर में संहिताओं में तो कहीं यह नहीं लिखा कि परब्रह्म ने यह सब किया किन्तु हम शंकराचार्य के अमरथाती के बारिस तो सदियों से मानते हैं कि परम सत्ता ब्रह्म ही है उसी की यह सृष्टि है हमें तो यह कहीं से खोजना ही था कि ब्रह्म का ही यह खेल हैं। वेद तो यों कहता है–

किं स्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत् स्वित् कथासीत्।
यतो भूमिं जनयन् विश्वकर्मा विद्यामौर्णोत् महिना विश्वचक्षाः।। (ऋ. 10/41)

विश्वनिर्माता ने सारे पदार्थों को इस भूमि को न जाने किस अधिष्ठान से, किस औजार से बना डाला, वेद यह भी कहता है ''यो यस्याध्यक्षः परमेव्योमन् सोऽङ्गवेद यद्वा न वेद'' सबसे पहले कौन था। यह कोई नहीं जानता, वह भी नहीं जो इसका मालिक है। यद्यपि वेद यह भी कहता है कि सर्वप्रथम ब्रह्म पैदा हुआ (ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्) किन्तु कर्मकाण्ड में उसका कुछ और अर्थ बतलाया जाता है। जबसे वेदान्त चिन्तन आरम्भ हुआ है और एक अमूर्त चिन्मय परम सत्ता ही परा विद्या द्वारा गम्य मानी गई है वही जगत् सृष्टि का मूल है यह घण्टाघोष हुआ, तब से ब्रह्म सब व्याप्त हो गया, ब्रह्म विद्या परा विद्या हो गई। यहीं पं. मधुसूदन ओझा के दशवाद रहस्य कथन का ब्रह्मसिद्धान्त को

सिद्धान्त पक्ष के रूप में स्थापित करने का रहस्य है। इस सबका मूल निर्णायक वचन तत्त्वदर्शी सनातनियों को संहिता में न मिला है मिला है तो समझा न गया है किन्तु तैत्तिरीयब्राह्मण में अवश्य मिल गया। सन्तुलन की दृष्टि से विवेकीजन उसे ही यों उद्धृत करते हैं।

ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आसीत् यतो द्यापृथिवी निष्टतक्षुः।
मनीषिणो मनसा वि ब्रवीमि वो ब्रह्माध्यतिष्ठद् भुवनानि धारयन्।।

(तैत्तिरीयब्राह्मण 2/8/9/7)

प्रजापति – यह ब्रह्मविद्या परमवन्दनीय है। अमूल्य है गीता भी ''ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे'' कहकर उसे चरम प्राप्तव्य मानती है किन्तु वेदों में सृष्टि के प्रक्रिया का जो वैज्ञानिक विवेचन है वह जिस संज्ञा को आधार मानकर चलता है वह है 'प्रजापति'। जब कुछ भी नहीं था तब कौन सा तत्त्व था इस पर बहस न करें तो यह वेदों में स्पष्ट किया गया है कि जब कुछ होने लगा तो उसे प्रारम्भ करने वाला प्रजापति ही था। पंडित मधुसूदन ओझा और पं. मोतीलाल शास्त्री द्वारा विवेचित सृष्टि विद्या का आधार भी यही प्रजाति है। जिन आदिम तत्त्वों से सारी सृष्टि होती है वे इसी प्रजापति के अंश हैं। यही वह षोडशी, पुरुष है जिसके सोलह तत्त्वों के विवेचन में सारी सृष्टि की विद्या और अविद्या समाहित हो जाती है। यही परात्पर निर्विशेष मूलतत्त्व है जिसे आप ब्रह्म कह लें उसके तीन स्वरूप और अंश बाद में प्रकट होते हैं। जिन्हें अवयव, अक्षर और क्षर कहा जाता है। प्रत्येक की पाँच पाँच कलायें बतलायी जाती है। इन कलाओं में ही आनन्द, विज्ञान, मन, प्राण, वाक् अव्यय की, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अग्नि, सोम, अक्षर की, मन, प्राण, वाक्, अन्न, अन्नाद्, क्षर की 15 कलायें आ जाती हैं। ये 15 और एक निर्विशेष, इस प्रकार 16 कलाओं का षोडशी पुरुष वेदों का प्रजापति हो जाता है। उपनिषदों का ब्रह्म। यह समन्वय सदियों से हमारा अभिगम कर रहा है यही हमारी सनातनता है जिसमें सारे पक्ष समाहित हो जाते हैं। वेद भी तो यही कहता है–

यस्माज्जातो न परो अन्यो अस्ति य आबभूव भुवनानि विश्वा।
प्रजापतिः प्रजया संबैराणस्त्रीणि ज्योतींषि स च ते स षोडशी।।

यह वेद का षोडशी प्रजापति किस प्रकार उपनिषदों के षोडशकल ब्रह्म के रूप में समझा जा सकता है। यही प्रमुख आधार भित्ति है ओझा जी के, म.म. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी के, मोतीलाल शास्त्री के वाङ्मय में प्रतिपादित वेदविज्ञान की जिसमें वेद, उपनिषद्, पुराण आदि ही नहीं, गीता के सिद्धान्तों का भी समुचित समन्वय हो जाता है। ओझा जी के ब्रह्मविज्ञान, ब्रह्मसिद्धान्त, महर्षिकुलवैभवम् आदि अनेक ग्रन्थों में गिरिधर शर्मा जी के ''वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति'' आदि ग्रन्थों में मोतीलाल जी के समस्त वाङ्मय में विशेषकर राष्ट्रपति भवन में 1956 में दिये गये पाँच व्याख्यानों में यह विशाल समन्वय दृष्टि

इतनी स्पष्ट और प्रमुख है जो हमारे सहस्राब्दियों के विविध शास्त्रान्तर्गत सिद्धान्तों को एक सूत्र में बाँध देती है।

इस पृष्ठभूमि में यह देखना दिलचस्प होगा कि श्रीऋषिकुमार मिश्र ने ''विफोर द बिगिनिंग'' किस प्रकार की सत्ता बतलायी है। मिश्र जी ने अपने ग्रन्थ में छहो दर्शनों की विषय वस्तु का विवरण पृथक् खण्डों में दिया है (जैसे 19वाँ अध्याय) वे दर्शन प्रस्थानों से परिचित हैं। शंकराचार्य की देन का वर्णन करते हैं, वेदान्त की दृष्टि से भी जो जानकारी पाठक को आवश्यक है वह (तीसरे खण्ड) चौथे अध्याय में जीव, ईश्वर और परमेश्वर शीर्षक से केवल संकेतित होकर (पाँचवें खण्ड) चौदहवें अध्याय में विस्तार से वर्णित है। जिसमें योगदर्शन के सिद्धान्त और उपनिषदों की विषय वस्तु आ गयी है। किन्तु सृष्टि प्रक्रिया के लिये वे वेद विज्ञान के प्रजापति वाले सिद्धान्त पर आधारित विवरण ही देते हैं। दशवादों के प्रपञ्च में न पड़कर प्रजापति की विविध भूमिकाओं को ही साष्ट कर देते हैं। यद्यपि वे जानते हैं कि ये दशवाद का है क्योंकि अम्भोवाद का उन्होंने एक स्थान पर संकेत किया है (पृ. 99) यह उनकी बौद्धिक वस्तुनिष्ठता का एक निदर्शन है।

तीसरा अध्याय प्रजापति के विवेचन को ही समर्पित है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि वेदों में प्रजापति द्वारा समस्त सृष्टि के उद्भव का सिद्धान्त ही प्रतिपादित है। उस प्रजापति के ही ये विभिन्न स्वरूप है जो सृष्टि के कारक बनते हैं। "Prajapati the first individual" के नारे के साथ लेखक का कथन है कि प्राण, मन और वाक् प्रजापति में प्रतिष्ठित हैं। इनकी परस्पर अन्तःक्रिया से सृष्टि हेती है यह विस्तार से इस अध्याय में वर्णित है। बड़े रहस्यात्मक ढंग से इस सिद्धान्त को इस प्रकार अभिहित किया गया है।

"Prajapti is the first Supraphysical 'individual to evolve from the three realities, or Supraphysical forces, of Mana, Prana and Wak. As a result, it is never seen without these three. Every individual in this universe, from the very largest to the tiniest, is a Prajapati and innumerable Prajapatis together constitute a universe (P. 53)" इस प्रसंग में प्रजापति के विभिन्न आयामों का नाभि, मूर्ति और महिमा नाम से वर्णन भी है।

इस प्रकार वेद विज्ञान के अपने विशिष्ट सिद्धान्त जो दर्शनों में या पुराणों में उस रूप में नहीं मिलते अपनी विज्ञानवादी गुरुपरम्परा के अनुरूप लेखक ने इसमें वैचारिक शैली की भाषा के साथ समाहित कर दिया है। मुझे ये देखकर अवश्य आश्चर्य हुआ कि कुछ अध्याय उन विषयों पर भी हैं जिनका वेद विज्ञान के साथ सीधा सम्बन्ध नहीं है। वे तन्त्रशास्त्र या पुराण के विषय है। जैसे 11वाँ अध्याय तन्त्रशास्त्र से सम्बद्ध त्रिपुरा रहस्य पर है जिसमें पौराणिक कथा का आधार लिया गया है। यद्यपि उसके साथ ब्रह्माण्ड पर चिन्तन "The universe as a dream" भी समाविष्ट है। तथा 12वाँ अध्याय विष्णुसहस्रनाम

पर है। जिसमें महाभारत में भीष्मोक्त विष्णु के सहस्रनामों की व्युत्पत्ति, महिमा और प्रासङ्गिकता स्पष्ट की गयी है। वेद विज्ञान से सम्बद्ध न होने पर भी इन दोनों विषयों का हमारे वाङ्मय चिन्तन में जो महत्त्व है वह निर्विवाद है इसलिए इन दोनों अध्यायों का अपना विशिष्ट महत्त्व है।

विष्णु – इसके ठीक बाद वह अध्याय आ जाता है जिसमें वेद विज्ञान की परिधि में विष्णु का एक निराला वैज्ञानिक महत्त्व प्रतिपादित है। जिसका उल्लेख न तो पुराणों में है न दर्शन में। वेदों में विष्णु की विशिष्ट महिमा वर्णित है। सूर्य का एक आयाम भी विष्णु के नाम से अभिहित है तथा इन्द्र तथा विष्णु का जोड़ा ब्रह्माण्ड में जो विशिष्ट भूमिका निभाता है उसका एक रोमाञ्चकारी सिद्धान्त भी प्रतिपादित है जो आज के विज्ञान में भी ठीक उसी प्रकार मान्य है जैसे वेदों में बताया गया है। 'इन्द्राविष्णू' का जोड़ा ठीक उसी प्रकार एक वैज्ञानिक क्रिया का प्रतीक है जिस प्रकार इन्द्र और वरुण की गति, पृथिवी की गति आदि के आधार पर गोलार्ध को अथवा दिन रात को नियमित करने वाली शक्ति बतायी जाती है। पृथिवी की आकर्षण शक्ति तो सभी को विदित है किन्तु ब्रह्माण्ड में स्थित जो आकर्षण शक्ति है जिसके द्वारा सारे ग्रह अपनी कक्षाओं में रहते हैं या घूमते हैं। वह विष्णु की देन है। यह वेद विज्ञान की अवधारणा है जो पुराणों में चाहे नहीं बतलायी गयी, वैज्ञानिक साहित्य में बतलायी गयी है। 'विष्णुना विधृते भूमी इति वत्सस्य वेदना'' इत्यादि तैत्तिरीयारण्यक के उद्धरण म.म. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी अपने ग्रन्थों में और व्याख्यानों में बहुधा देते रहे हैं।

इस प्रकार प्रत्येक पदार्थ या ऊर्जा को अपनी ओर खींचने वाली जो शक्ति है वह वेद विज्ञान में विष्णु है। ठीक इसके विपरीत एक विकर्षणशक्ति भी होती है जो पदार्थ या ऊर्जा को खींचने के बजाय फेंकती है। आज का विज्ञान का छोटे से छोटा छात्र इन शक्तियों को Centripetal Force or Centrifugal Force के नाम से जानता है। इनका अनुवाद भी क्रमशः अभिकेन्द्रक बल अथवा आकर्षण शक्ति और अपकेन्द्रक बल अथवा विकर्षण शक्ति नाम से सुप्रचलित है। ठीक ये ही क्रियायें क्रमशः विष्णु और इन्द्र अर्थात् इन्द्राविष्णू का जोड़ा वेदविज्ञान में कर्ता बताया जाता है कि इन्द्र हर वस्तु को बाहर फेंकता है, विष्णु अपनी ओर खींचता है। इसके प्रतीकात्मक वर्णन सर्वत्र उपलब्ध हैं। इस पर मिश्र जी ने पृथक् 13वाँ अध्याय लिखा है। "Indra and Vishnu two warring Gods" इसमें इन दोनों की यही क्रियाएँ ब्रह्माण्ड में होती बतलायी गयी हैं। आकर्षणशक्ति और विकर्षणशक्ति का नाम न देकर Centripetal और Contifugal अभिकेन्द्रक और अपकेन्द्रक बल नाम भी न देकर (क्योंकि शायद लेखक का यह मानस था कि अन्य आम संज्ञाओं से वेद विज्ञान की इन व्यापक अवधारणाओं को सीमित करना उचित नहीं होगा क्योंकि इन्द्र के 14 प्रकार तथा अन्य आयाम भी लेखक द्वारा वर्णित हैं।) इन्हें लेखक ने यों स्पष्ट किया है- "Motion falls into the two categories of inflow and outflow (of energy) and as we have pointed out above, the inflow is Vishnu and the outflow is Indra (P. 290)" लेखक ने

वेदविज्ञान, प्राणविद्या, सृष्टिविद्या, ज्ञानमीमांसा, सत्तामीमांसा, प्रमाणमीमांसा आदि विभिन्न शाखाओं के तत्त्वों को 9 खण्डों और 21 अध्यायों में वेद, उपनिषद्, पुराण, शास्त्र आदि के सन्दर्भो के साथ इस प्रकार वर्णित किया है कि यह ग्रन्थ विश्वकोषीय प्रकृति का आकर ग्रन्थ लगने लगता है। इन सबके अतिरिक्त हमारी कल्पों और मन्वन्तरों तथा चतुर्युगियों की कालगणना बड़ी स्पष्टता के साथ विस्तार से समझायी गयी है जो इस ग्रन्थ की प्रमुख विशेषता है। अन्त में कुछ उद्धरण उन विद्वानों की मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करने हेतु दिये गये हैं जो पाश्चात्यों की इस मान्यता का सप्रमाण खण्डन करते हैं कि आर्य बाहर से आये थे, आक्रान्त थे आदि। इनमें प्रमुख हैं डेविड फ्राउले और नवरख एस. रामराज जो सरस्वती नदी के इतिहास के पुनरुद्धार के पुरोधा माने जाते हैं और जिनके कारण सिन्धु घाटी सभ्यता कालीन भारत के प्राचीन इतिहास के उस अध्याय को सरस्वती सभ्यता या सिन्धु सरस्वती सभ्यता के नाम से पुकारा जाने लगा है।

इन संकेतों से स्पष्ट हो गया होगा कि ऋषिकुमार मिश्र जी के इस ग्रन्थ ने किस व्यापक फलक पर वेदान्त विज्ञान, औपनिषद् चिन्तन और नवीनतम वैज्ञानिक अवधारणाओं का सुसमन्वित प्रस्तुतीकरण कर भारतीय तत्त्वचिन्तन का एक ज्ञानकोष हमें दिया है।

अध्यक्ष, आधुनिक संस्कृत पीठ, ज.रा. राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय,
प्रधान सम्पादक 'भारती' संस्कृत मासिक,
पूर्व अध्यक्ष, राजस्थान संस्कृत अकादमी तथा
निदेशक संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार,
मञ्जु निकुञ्ज, सी/8 पृथिवीराज रोड, सी-स्कीम, जयपुर, 302001

रामायण : कतिपय प्रामाणिक तथ्य

डॉ. ताराशंकर शर्मा 'पाण्डेय'

भए प्रकट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनिमनहारी अद्भुत रूप बिचारी।।

माता कौशल्या को आनन्द देने वाला तथा मुनियों के मन को भाने वाला भगवान् विष्णु के अवतार श्रीराम का यह अद्भुत रूप स्वयं उनकी लीला का ही अंश है।

भगवान राम के सच्चिदानन्द स्वरूप से सम्बद्ध नाम, रूप, लीला और धाम ये चार पदार्थ हैं-

रामस्य नाम रूपं च लीला धाम परात्परम्।
एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्दविग्रहम् ।।

भगवान् राम ही समस्त लोकों के गुरु हैं क्योकि ऋषि मुनि ज्ञान-सागर में विद्या से ही रमण करते है-

यस्मिन् रमन्ते मुनयो विद्यया ज्ञानविप्लवे।
तं गुरुं प्राह रामेति रमणाद् राम इत्यपि।।

(अध्यामरामायण 3/40)

चक्रवर्ती नरेश महाराज दशरथ ने सन्तान न होने पर कुलगुरु मुनिराज वशिष्ठ की कपा एव महर्षि ऋष्यशृंग जी के आचार्यत्व में पुत्रेष्टि यज्ञ सम्पादित कर भगवान् विष्णु से अंशों सहित अवतार लेने का आश्वासन प्राप्त किया था।

महर्षि वाल्मीकि ने स्पष्टतया जन्मकाल के विषय में लिखा है -

ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ।।
नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पंचसु।
ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सह।।
प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम्।
कौसल्याजनयद् रामं दिव्यलक्षणसंयुतम्।।

(वारा बालकाण्ड 18/8.9.10)

अगस्त्य संहिता के अनुसार त्रेता युग के अन्तिम दौर में चैत्र शुक्ल नवमी, सोमवार के दिन. मध्याह्नकाल में, पुनर्वसु नक्षत्र, कर्क लग्न में जब सूर्य अन्यान्य पाँच ग्रहों की शुभ दृष्टि के साथ मेष

राशि में विराजमान थे तभी साक्षात् भगवान् श्रीराम का माता कौशल्या के गर्भ से जन्म हुआ। भगवान् वेदव्यास ने महाभारत में स्पष्ट लिखा है-

चैत्रशुक्लनवम्यां तु जातो रामः स्वयं हरिः।
पुनर्वस्वृक्षयुक्तायां मध्याह्ने कौशले भृगौ।।

(सभा वनपर्व)

इस सन्दर्भ में अधोलिखित प्रमाण भी उपलब्ध होता है -

मासे मघौ या नवमी सुयुक्ता सिताऽदितीशेन शुभेन येन।
कर्के महापुण्यतमे सुलग्ने जातोऽत्र रामः स्वयमेव विष्णुः।।
सदात्र कुर्वीत मुदा व्रतोत्सवं रामार्चनं जागरणं महाफलम्।
अनेकजन्मार्जितपापनाशनं श्रीरामकीर्तेः श्रवणं च कीर्तनम्।।

भगवान् विष्णु का श्रीराम के रूप में अवतार का उद्देश्य लंकापति दशानन रावण के वध के साथ-साथ अन्यान्य दानवों एवं दैत्यों का विनाश कर धर्म की स्थापना एवं सज्जनो की रक्षा करना था। 'व्रतराज' ग्रन्थ में इस उद्देश्य को बहुत ही स्पष्ट शब्दों में कहा है -

दशाननवधार्थाय धर्मसंस्थापनाय च।
दानवानां विनाशाय दैत्यानां निधनाय च।।
परित्राणाय साधूनां जातो रामः स्वयं हरिः।

महर्षि पराशर के अनुसार सूर्यादि ग्रहों ने दैत्यों के बलनाश एवं देवों की बलवृद्धि हेतु अवतार ग्रहण किया जिसमें भगवान राम सूर्य के तथा श्रीकृष्ण चन्द्र के अवतार हैं-

दैत्यानां बलनाशाय देवानां बलवृद्धये।
धर्मसंस्थापनार्थाय ग्रहा जाताः शुभाः क्रमात्।।
रामोऽवतारः सूर्यस्य चन्द्रस्य यदुनायकः।
नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च।।
वामनो विबुधैज्यस्य भार्गवो भार्गवस्य च।
कूर्मो भास्करपुत्रस्य सैहिकेयस्य शूकरः।।
केतोर्मीनावतारश्च ये चान्ये तेऽपि खेटजाः।

(बृहत्पाराशरहोराशास्त्र पू. 1/28-30)

महर्षि पराशर ने इन सभी अवतारों में से राम, कृष्ण, नृसिंह तथा शूकर अर्थात् वराह इन चार अवतारों को ही पूर्णावतार माना है-

रामः कृष्णश्च भो विप्र! नृसिंहः शूकरस्तथा।
एते पूर्णावताराश्च ह्यन्ये जीवांशकान्विताः।।

(बृहत्पाराशरहोराशास्त्र पूर्व 1/25)

भगवान के विभिन्न अवतारों में कलाओं की सर्वाधिकता भगवान राम में स्वीकार की गई है–

तदा तु भगवान् साक्षाच्चतुर्दशकलो हरिः।
सीतापतिस्तदहृदये निवासं कृतवान् मुदा।।

(भविष्यपुराण प्रतिसर्गपर्व 3/7)

भविष्यपुराण के इस प्रमाण के आधार पर कहा जा सकता है कि सीतापति भगवान् राम चौदह कलाओ से युक्त स्वयं हरि के अवतार हुए। भगवान् राम ने मर्यादाओं की सीमाओ में रहते हुए विश्वकल्याणार्थ कार्य किया।

अयोध्या नरेश महाराज दशरथ की तीनों रानियों में कौशल्या से नवनीरद-श्याम भगवान श्रीराम, सुमित्रा से गौरवर्ण लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न तथा कैकेयी से श्यामवर्ण भरत का जन्म हुआ।

भगवान् श्रीराम के जन्म पर देवों, गन्धर्वो, अप्सराओं आदि सभी ने अपनी-अपनी प्रसन्नता अनेक प्रकार से प्रकट की। अप्सराएँ नाचने लगी. गन्धर्व मधुर गान करने लगे. देवों ने दुन्दुभी बजाई और आकाश से पुष्पवृष्टि की गई। श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के अनुसार अयोध्या में भी श्रीराम जन्म महोत्सव बहुत ही उत्साह से मनाया गया। अयोध्या में मनुष्यों की भारी भीड़ एकत्रित हो गई. गलियाँ और सडकें लोगों से खचाखच भरी थीं, नट और नर्तक अपनी-अपनी कलाएँ दिखाने लगे-

जगुः कलं च गन्धर्वा ननृतुश्चाप्सरोगणाः।
देवा दुन्दुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिश्च खात् पतत्।।
उत्सवश्च महानासीदयोध्यायां जनाकुलः।
रथ्याश्च जनसम्बाधा नटनर्तकसंकुलाः।।

(रामायण बालकाण्ड 18/17,18)

महाराज दशरथ ने अपने चार राजकुमारों के जन्मोत्सव पर चारण, भाट आदि को अनेकों उपहार दिये, ब्राह्मणों को हजारों गायें एवं विपुल मात्रा में धन दिया। जन्म के ग्यारहवें दिन के पश्चात् कुलगुरु वसिष्ठ ने इन चारों पुत्रों का नामकरण किया- ज्येष्टपुत्र का राम, कैकयी पुत्र का भरत, सुमित्रापुत्र का लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न आदि नाम किया-

अतीत्यैकादशाहं तु नामकर्म तथाकरोत्।
ज्येष्ठं राम महात्मानं भरतं कैकयीसुतम्।।

सौमित्रिं लक्ष्मणमिति शत्रुघ्नमपरं तथा।।
वसिष्ठः परमप्रीतो नामानि कुरुते तदा।।

(बालकाण्ड 20/21,22)

चारो राजकुमारों ने अपने पिता से ही शास्त्र एव शस्त्र की शिक्षा प्राप्त की। महर्षि वसिष्ठ के अनुसार किसी भी व्यक्ति के जन्म लेने के बाद उसके तीन गुरु स्वाभाविक रूप से होते है माता, पिता और आचार्य-

पुरुषस्येह जातस्य भवन्ति गुरवः सदा।
आचार्यश्चैव काकुत्स्थ! पिता माता च राघव।।

(वा.रा.अ.क. 111/2)

राम आदि चारों भाईयो का शिक्षा के लिये किसी भी गुरुकुल में प्रवेश लेने का उल्लेख वाल्मीकीय रामायण में कहीं भी नहीं मिलता है।

राम लक्ष्मण आदि चारों राजकुमारों को शिक्षा उनके पिता महाराज दशरथ ने दी। महाराज दशरथ स्वयं वेदादि शास्त्र एव धनुर्वेदादि शस्त्र की समस्त विद्याओं में पारंगत थे, अतः अपने पुत्रो को उनके द्वारा शिक्षा देना स्वाभाविक रूप से भी सिद्ध होता है-

पिता दशरथो हृष्टो ब्रह्मा लोकाधिपो यथा।
ते चापि मनुजव्याघ्रा वैदिकाध्ययने रताः।।
पितृशुश्रूषणरता धनुर्वेदे च निष्ठिताः।

(वा.रा.बा.का. 18/36,37)

इस प्रसंग से स्पष्ट है कि वेदविद्या का अध्ययन करते हुए चारों भाई पिता की सेवा में लगे रहते थे।

जब चारों भाई शिक्षा प्राप्त कर समस्त गुणों से समृद्ध हुए तो महाराज दशरथ अतिप्रसन्न हुए-

इष्टः सर्वस्य लोकस्य शशांक इव निर्मलः।
गजस्कन्धेऽश्वपृष्ठे च रथचर्यासु सम्मतः।।
धनुर्वेदे च निरतः पितुः सुश्रूषणे रतः।
वभूव परमप्रीतो देवैरिव पितामहः।
ते यदा ज्ञानसम्पन्नाः सर्वे समुदिता गुणैः।।

(वा.रा.बा.का. 18/34)

इस प्रकार चारों भाईयों ने अपने पिता महाराज दशरथ की सेवा करते हुए गजशास्त्र, अश्वशास्त्र, रथ संचालन तथा धनुर्वेद आदि समस्त विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया। वाल्मीकि रामायण के युद्ध काण्ड

में भगवान शिव का वचन भी इसी बात को सिद्ध करता है-

एष राजा दशरथो विमानस्थः पिता तव।
काकुत्स्थ मानुषे लोके गुरुस्तव महायशाः।।

(यु.का. 119/7)

महाराज दशरथ द्वारा शिक्षा दिये जाने का यह प्रसंग महाकवि कालिदास ने भी रघुवंश में वर्णित किया है-

त्वचं स मेध्यां परिघाय रौरवीमशिक्षितास्त्रं पितुरेव मन्त्रवित्।
न केवलं तद्गुरुरेकपार्थिवः क्षितावभूदेकधनुर्धरोऽपि सः ।।3/31।।
गुणैराराधयामासुस्ते गुरुं गुरुवत्सलाः।
तमेव चतुरन्तेशं रत्नैरिव महार्णवाः।।10/85।।

ज्ञान सम्पन्न हो जाने पर महाराज दशरथ ने चारों भाईयों के विवाह के बारे में उपाध्याय वसिष्ट और अपने बन्धु बान्धवों से चर्चा की-

अथ राजा दशरथस्तेषां दारक्रियां प्रति।
चिन्तयामास धर्मात्मा सोपाध्यायः सबान्धवः।।

(बा.रा.बा.चा 18/37,38)

इस काल में ही एक दिन महर्षि विश्वामित्र अपने आश्रम में राक्षसों के उपद्रव की शान्ति के लिए गहाराज दशरथ से उनकी इच्छा न होने पर भी राम और लक्ष्मण को याचना कर ले गये। मुनिवर का आश्रम एवं यज्ञ रक्षित हुआ, इसमें राक्षसी ताटका एक ही बाण से धराशायी हई, दल सहित सुबाहू मारा गया तथा उसका भाई मारीच बाण के आघात से सौ योजन दूर समुद्र-तट पर जा गिरा। तपोवन में ही महर्षि विश्वामित्र को विदेहराज जनक से सीता-स्वयंवर आमन्त्रण मिला।

भगवती सीता उन विदेहराज की अयोनिजा कन्या थी। वैशाख मास शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को पुष्य नक्षत्र युक्त मंगलवार के दिन मिथिलाधिपति राजा जनक मध्याह्नकाल में संतान प्राप्ति की कामना से यज्ञ की भूमि जोत रहे थे, उसी समय पृथ्वी से भगवती सीता का प्राकट्य हुआ-

पुष्यन्वितायां तु कुजे नवन्या, श्रीमाधवे मासि सिते हलेन।
कृष्टा क्षितिः श्रीजनकेन तस्यां सीताविरासीद व्रतमत्र कुर्यात्।।

(श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर-80)

जोती हुई भूमि तथा हल की नोक को भी सीता कहते हैं, अतः प्रादुर्भूत भगवती देवी 'सीता के ही नाम से विख्यात हुई।

जनकपुर में प्रवेश के बाद पुष्पवाटिका में सीता को देख भगवान राम के मुख से बरबस ही निकल पड़ा-

सुन्दरता कहूँ सुन्दर करई।
छविगृहँ दीपशिखा जनु बरई।।

यहाँ सीता के लिए दी गई दीपशिखा की उपमा कालिदास की दीपशिखा का स्मरण दिलाती है।

जनकपुत्री भूमिसुता सीता उसे वरण करेगी, जो भगवान शंकर के महाधनुष 'पिनाक' को तोडेगा। मिथिला नरेश जनक की इस प्रतिज्ञा को राम ने पूर्ण की। स्वयंवर तो हुआ पर विधिवत् विवाह-परम्परा के निर्वाह के लिए महाराज जनक ने अपने दूत द्वारा महाराज दशरथ को विवाह के लिए बारात लेकर आने का निमन्त्रण भेजा। इसके बाद मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष की पंचमी को जनकपुर में श्रीराम का सभी भाइयो के साथ विवाह सम्पन्न हुआ-

अगहन शुक्ला पंचमी भानुवार शुभ वर्ष।
परिणय सीताराम को यह ज्योतिष निष्कर्ष।।

(भँवर जी जानाडा रचित रामकथा महाकाव्य-65/क)

इसमें भगवान राम ने सीता का, लक्ष्मण ने जनक की (पत्नी सुनयना से उत्पन्न) औरस पुत्री उर्मिला का तथा जनक के भाई की कन्याओं में भरत ने माण्डवी का, शत्रुघ्न ने श्रुतिकीर्ति का वरण किया-

रामाय प्रददौ सीतां लक्ष्मणायोर्मिलां ददौ।
भरताय सुतां प्रादान्माण्डवीं मुनिपुङ्गव।।
शत्रुघ्नाय ददौ कन्यां श्रुतकीर्ति शुभाननाम्।
तासां सीता तु सम्प्राप्ता यज्ञभूमिविशोधने।।
उर्मिलौरससम्भूता द्वे परे भ्रातृकन्यके।

(देवीपुराण शक्तिपीठाक 38/11.12.13)

जहाँ भगवती सीता का प्राकट्य हुआ मिथिला के उस स्थान को लोग पुनौरा (पुण्यारण्य का अपभ्रश रूप) कहते हैं. यह स्थान मिथिला-प्रगन्ना में सीतामढ़ी से दो किलोमीटर दूर है।

वर्तमान बिहार राज्य स्थित सीतामढी (मढी-कुटिया) स्थान में जानकी का हलकर्षण से आविर्भाव हुआ। राजा जनक की राजधानी जनकपुर जहाँ भगवान् राम का विवाह संस्कार हुआ वह बिहार राज्य के उत्तर (सम्प्रति नेपाल देश) में स्थित है। सभी इतिहासकारों ने एकमत होकर जनकपुर को माता जानकी की मातृभूमि के रूप में माना है।

इस प्रकार चैत्र शुक्ल नवमी को मध्याह्नकाल में भगवान् श्री राम का तथा वैशाख शुक्ल नवमी को मध्याह्न काल में भगवती सीता का आविर्भाव होने से दोनों ही नवमी तिथि वैष्णवों के लिए परम पावन दिवस है।

भगवान् श्रीराम अवतार का मुख्य उद्देश्य पुलस्त्य के पौत्र तथा विश्रवा के पुत्र लंकाधिपति रावण-वध के साथ-साथ साधुओं की रक्षा और धर्म की स्थापना करना था। अतः महाराज दशरथ द्वारा राम के जन्म दिवस के शुभ समय पर निश्चित किया गया राम के राज्याभिषेक के अवसर पर ही महारानी कैकेयी ने वचनबद्ध महाराज से भरत को राज्य एवं राम को चौदह वर्ष के वनवास का वर मांगा। रघुवंश की मर्यादा एवं पितृवचन की रक्षा के लिए भाई लक्ष्मण एवं पत्नी जानकी के साथ भगवान राम ने वनगमन किया। वनवास के दौरान राम जब चित्रकूट में थे, तब पिता दशरथ के स्वर्गगमन का समाचार मिला। वशिष्ठादि गुरुजनो द्वारा राजा नियुक्त किये गये भरत ने राज्य स्वीकार नहीं किया, अपितु राम से वनवास में ही सम्पर्क कर उन्हें राज्य सम्भालने हेतु निवेदन किया। भरत के बहुत अनुनय विनय करने पर भी भगवान राम ने पितृवचन आदेश की पालना में रहते हुए राज्य स्वीकार नहीं किया तो भरत ने उनकी चरण पादुकाएँ सिंहासन पर स्थापित कर राज्य का संचालन किया तथा नन्दिग्राम गे ही चौदह वर्ष तक तप करते हुए 'गोमूत्र-यावक' अर्थात गोमूत्र में जौ पकाकर उसके आहार पर रहे।

चित्रकूट से प्रस्थान कर भगवान राम ने दण्डकारण्य में प्रवेश किया। वही पर रहते हुए 'विराध' राक्षस का वध किया तथा जनस्थान में रहने वाली शूर्पणखा को लक्ष्मण ने विरूपित किया। दोनों भाईयों ने जनस्थान में विचरण करने वाले शूर्पणखा द्वारा प्रेरित खर, दूषण, त्रिशिरा आदि चौदह हजार राक्षसों का वध किया। लंकाधिपति रावण ने अपने जातीय राक्षसों के वध से क्रुद्ध होकर मारीच के सहयोग से सीता का हरण किया।

लंकाधिपति रावण द्वारा सीताहरण के पश्चात श्रीहनुमान जी ने सौ योजन विस्तृत समुद्र लांघ कर सीता का पता लगाया।

लंका पर आक्रमण करने के लिए सेना के प्रस्थान हेतु समुद्र पर नल और नील द्वारा पुल बाँधा गया, जो 'रामसेतु' के नाम से विख्यात हुआ। इस रामसेतु की महिमा का वर्णन भगवान वेदव्यास ने स्कन्दपुराण में किया है :

अस्ति रामेश्वरं नाम रामसेतौ पवित्रितम्।
क्षेत्राणामपि सर्वेषां तीर्थानामपि चोत्तमग।।
दृष्टमात्रे रामसेतौ मुक्तिः संसारसागरात्।

_(स्कन्दपुराण, ब्राह्म, सेतुमाहात्म्य)

अर्थात् भगवान् राम द्वारा बनवाये गये रामसेतु पर रामेश्वर नामक तीर्थ है, जो सभी तीर्थों में उत्तम है तथा जिसके दर्शन करने पर संसार सागर से मुक्ति हो जाती है।

धार्मिक मासिक पत्र कल्याण (वर्ष 81-3, 4) के अनुसार सन् 1966 ई. में उपग्रह जैमिनि -द्वितीय ने पृथ्वी पर इस लुप्त सेतु का चित्र भेजा। इसके बाइस साल बाद आई.आर एस.-1-ए ने तमिलनाडु के तट पर स्थित रामेश्वर और जाफना प्रायद्वीप के बीच समुद्र के भीतर एक भूमि-पट्टी का पता लगाया और उसका चित्र खींचा। 'राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद' के महानिदेशक के अनुसार नासा चित्रों के संग्रहालय के 75 प्रतिशत चित्र जनता के लिए अमरीका से बाहर उपलब्ध हुए है। सन् 1993 ई. में राजधानी दिल्ली के प्रगति मैदान में स्थित 'राष्ट्रीय विज्ञान केन्द्र की प्रदर्शनी में उपग्रह द्वारा खींचा गया एक ऐसा चित्र दिखाया गया जो इस बात का साक्ष्य प्रस्तुत करता है कि कभी रामेश्वरम् से श्रीलंका के जाफना तक समुद्र पर एक पुल बनाया गया था। 14 दिसम्बर 1966 को अतरिक्ष से नासा द्वारा इस चित्र के साथ अनेक चित्र लिये गये। इन चित्रों एवं सामग्रियों से यह ज्ञात हुआ कि रामेश्वरम् और श्रीलंका के बीच 30 मील (48 किलोमीटर) लम्बा तथा सवा मील (लगभग 2 किलोमीटर) चौडा सेतु पानी में डूबा पड़ा है। इस सेतु के ऊपर जहाँ तहाँ 3 से 30 फुट तक का जलस्तर है। एक एजेन्सी के अनुसार रेत और पत्थर से मानवनिर्मित यह सेतु 17 लाख 50 हजार वर्ष पुराना है।

भगवान श्रीराम ने शारदीय नवरात्र में देवी अर्चना की तथा विद्वानों के मतानुसार आश्विन शुक्ल दशमी तिथि को श्रीराम ने अपनी विजय-यात्रा का प्रारम्भ किया। इस सम्बन्ध में हनुमन्नाटक का यह श्लोक भी उल्लिखित किया जा सकता है-

अथ विजयदशम्यामाश्विने शुक्लपक्षे,
दशमुखनिधनाय प्रस्थितो रामचन्द्रः।
द्विरदविधुमहाब्जैर्यूथनाथैस्तथान्यैः,
कपिभिरपरिमाणैर्व्याप्तभूदिक्खचक्रैः।।

अतएव यह तिथि विजय-यात्रा के लिए शास्त्र सम्मत मानी गई है -

आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्यां तारकोदये।
स कालो विजयो नाम सर्वकार्यार्थसाधकः।।

ज्योतिषशास्त्र के अनुसार भी राजाओं की दिग्विजय के लिए यह तिथि जयसिद्धिकरी कही गई है।

भगवान राम ने रावणवध एव लंकाविजय के बाद राक्षसेन्द्र विभीषण का लंकाधिपति के रूप से अभिषेक किया तथा पुष्पक विमान से अयोध्या प्रस्थान किया। बीच में भरद्वाज आश्रम पर विश्राम करते हुए हनुमान द्वारा नन्दिग्राम में स्थित भरत के पास सन्देश भेजा। नन्दिग्राम में आकर भगवान् राम

जटाओं का परित्याग कर भरत आदि के साथ अयोध्या आये। वर्तमान में प्रचलित परम्परा के अनुसार कार्तिक मास की कृष्णा चतुर्दशी को भगवान् श्रीराम अयोध्या लौटे तो संयोग से उसी दिन श्री हनुमान जी की जन्मतिथि भी थी। दूसरे दिन कार्तिक अमावस्या को राम के आगमन पर दीपोत्सव मनाया गया। परन्तु दीपावली से पूर्व राम का अयोध्या आना ऐतिहासिक भूल का परिणाम है। क्योंकि भगवान राम का राज्याभिषेक उनके जन्म दिवस चैत्र शुक्ला नवमी को होना था और तभी वनवास की आज्ञा हुई तदनुसार चैत्र शुक्ल पक्ष में ही राम का अयोध्या आगगन निश्चित होता है।

श्रीराम ने सौ अश्वमेध यज्ञ किये तथा असंख्य गायें, स्वर्ण आदि का दान दिया। मूल रामायण के अनुसार इस प्रकार धर्मपूर्वक शासन करते हुए भगवान राम ने ग्यारह हजार वर्ष तक राज्य किया -

दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च।
रामो राज्यमुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति।।

(मूल रामायण-97)

भगवान् राम के धर्मपूर्वक शासन को ही उत्तम मानते हुए वर्तमान में राम-राज्य की संज्ञा दी जाती है।

आचार्य, साहित्य विभाग
निदेशक, शैक्षणिक परिसर,
ज.रा. राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
2381, 'पाण्डेय भवन'
खजाने वालों का रास्ता, जयपुर (राज.)

संस्कृत वर्णमाला

डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

माहेश्वरी प्रचलिता संस्कृते वर्णमातृका।
या वै पाणिनये पूर्वं सूत्रैः प्रोवाच शङ्करः।।1।।
1. अ इ उ ण्, 2. ऋ लृ क् 3. ए ओ ङ् 4. ऐ औ च्
5. ह य व र ट्, 6. ल ण् 7. ञ म ङ ण न म् 8. झ भ ञ्
9. घ ढ ध ष् 10. ज ब ग ड द श्
11. ख फ छ ठ थ च ट त व् 12. क प य्
13. श ष स र् 14. ह ल्
माहेश्वराणि सूत्राणि तानीमानि चतुर्दश।
पाणिनिर्निजशास्त्रस्य मूलान्येतान्युवाच ह।।3।।
भाषाव्युत्पत्तिसिद्ध्यर्थं तपस्यामास्थितं मुनिम्।
डमरूनादनेनैव शिवः सूत्राण्युवाच ह।।4।।
एषु संस्कृतभाषाया वर्णमालोपदेशिता।
यस्यामाययते सर्वः पाणिनेः शास्त्रविस्तरः।।5।।
माहेश्वराणामेतेषां सूत्राणामन्तिमान्तिमाः।
हल् वर्णास्तु ये वै ते इतः पाणिनिना मताः।।6।।
सूत्रोक्तानां हि वर्णानां गणनावसरे त्विमे।
गणनातो बहिर्भूताः तस्मात् ते कथिता इतः।।7।।
महेश्वरोपदिष्टेषु मूलसूत्रेषु नैव ते।
किन्तु पाणिनिना पश्चात् स्वोपयोगाय योजिताः।।8।।
प्रत्याहारविधानार्थं तेषां सूत्रेषु योजनम्।
सम्बन्धितेषु वर्णेषु गणना नार्हतामपि।।9।।
प्रत्याहारो हि नैकेषां वर्णानामेकसंज्ञया।
समाहाराय संसृष्टा संज्ञा पाणिनिना स्वयम्।।10।।
पूर्वाक्षरेण केनापि सह संयोजनादिताम्।
जायते नामधेयं यत् प्रत्याहारः स उच्यते।।11।।

प्रत्याहारेण तत्रत्या: प्रथमाक्षरमिश्रिता:।
गृह्यन्ते मध्यमा वर्णा: किन्तु ते नान्तिमा इत:।।12।।
यथा हि अइउवर्णा अण्नाम्ना प्रतिसूचिता:।
इउऋलृ च चत्वारो वर्णा इगिति संज्ञिता:।।13।।
आद्यायां तु चतु:सूत्र्यां उपदिष्टा: स्वराक्षरा:
तत: दशसु सूत्रेषु व्यञ्जनानां निदर्शनम्।।14।।
श्रवणग्रहण: शब्दो वर्णोऽवर्णश्च स द्विधा।
भाषात्मको भवेद्वर्ण: निर्वर्ण: केवलो ध्वनि:।।15।।
स्वरव्यञ्जनभेदेन वर्णशब्दो द्विधा भवेत्।
अन्यो भेरीमृदङ्गादिजन्य: शब्दो ध्वनिर्मत:।।16।।
(शब्दो वर्णात्मको द्वेधा स्वरव्यञ्जनरूपत:।
ध्वनिर्भेरीमृदङ्गादिशब्दो वर्णभिदां विना।।)
वर्णै: शब्दोदय: सार्थ: सार्थै: शब्दै: पदोदय:।
पदैर्वाक्योदयश्चैनं भाषणं वर्णमूलकम्।।17।।
गद्यपद्यात्मकं लोके भाषणं द्विविधं मतम्।
गद्यं छन्दोविनिर्मुक्तं पद्यं छन्दसि संयतम्।।18।।
एकार्थसमवेतानाम् अन्वितानां परस्परम्।
सुप्तिङन्तपदानां हि सयो वाक्यमुच्यते।।20।।
अपदं न प्रयुञ्जीत विभक्त्यन्तीकृतं पदम्।
नामधात्वन्तयोगार्हा सुप्तिङ्शब्दा विभक्तय:।।21।।
सुबन्तं च तिङन्तं च द्विविधं पदमुच्यते।
सुबन्तं सुब्विभक्त्यन्तं तिङन्तं तिङविभक्तियुक्।।22।।
सुप्तिङन्तपदानां हि योजनात: परस्परम्।
वाक्यं निर्मीयते तच्च भाषणेषु प्रयुज्यते।।23।।
सुप्तिङन्तं विधायैव वक्तव्यं संस्कृते सदा।
अपदं न प्रयुञ्जीतेत्येतस्यार्थोऽयमेव हि।।24।।

प्राचार्यचर:,
श्री दादू आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर

हस्तविद्याया: प्रमुखता

डॉ. सीमा शर्मा

''अङ्गे हस्त: प्रशस्तोऽयं शीर्षादपि विशिष्यते।
साध्यन्ते पादशौचाद्या धार्मिक्यो येन सत्क्रिया:।।''

अङ्गविद्यायां यद्यपि सर्वशरीरलक्षणानामध्ययनं क्रियते। तथापि सर्वेषु शरीराङ्गेषु हस्तोऽयं प्रशस्तोऽस्ति यतोहि मनुष्य: हस्ताभ्यामेव पादशौचादिसर्वधर्माधर्मकर्माणि प्रतिपादयति। कथितम् –

''हस्तेन पाणिग्रहणं पूजाभोजनशान्तय:।
साध्या विपक्षविध्वंसप्रमुखा: सकला: क्रिया:।।
मन्त्राक्षराणामोङ्कारे यथा तत्त्वं प्रतिष्ठितम्।
तथा सामुद्रिकस्यापि तत्त्वं हस्ते निवेशितम्।।
नास्ति हस्तात्परं ज्ञानं त्रैलोक्ये सचराचरे।
यद्ब्राह्म्यं पुस्तकं हस्ते धृतबोधाय जन्मिनाम्।।

प्राचीनमतानुसारं हस्तेनैव विवाहपूजाभोजनशान्तिशत्रुविनाशादिकार्याणि भवन्ति। यथा मन्त्रेषु ओङ्कारस्य 'ऊँ'–तत्त्वस्य प्रतिष्ठा तथैव सामुद्रिकशास्त्रेषु हस्तस्य प्रधानता भवति। तस्मिन् सर्वाणि तत्त्वानि निहितानि सन्ति। हस्तरेखाशास्त्रज्ञानात्परं किमपि ज्ञानं नास्ति।

''सर्वाङ्गलक्षणप्रेक्षाव्याकुलानां नृणां मुदे।
श्रीसामुद्रेण मुनिना तेन हस्त: प्रकाशित:।।''

समुद्रऋषिणापि कथितं यत् हस्तं तु ब्रह्मणा निर्मिता ईदृशी अक्षया जन्मपत्री अस्ति येन जीवनपर्यन्तं व्यवस्थितेन हस्तरेखा: ग्रहवत् फलानि ददति।.

''अक्षया जन्मपत्रीयं ब्रह्मणा निर्मिता स्वयम्।
ग्रहा रेखाप्रदा यस्यां यावज्जीवं व्यवस्थिता।।''

(क) हस्तपरीक्षाया: प्रकारत्रयम्

''दर्शनात्स्पर्शनाद्वापि तथा रेखाविमर्शनात्।
हस्तज्ञानं त्रिधा प्रोक्तं पुरातनमहर्षिभि:।।''

प्राचीनमतानुसारं हस्तद्वारा फलादेशात् पूर्वं हस्तपरीक्षणमावश्यकं वर्तते। अस्य त्रीणि चरणानि हस्तदर्शनं हस्तस्पर्शनं हस्तविमर्शन वर्तन्ते।

आधुनिकविचारधारायामपि विचारकै: कथितं यत् हस्तं दर्शयित्वा स्पृष्ट्वा रेखानां विश्लेषणं कृत्वा मनुष्यस्य भविष्यफलं सरलतया ज्ञातुं शक्यते।

(ख) हस्तस्य व्यवहारिकं महत्त्वम्

सामान्यतया हस्तेनेव सर्वाणि कार्याणि क्रियन्ते। हस्तं तु ब्रह्मणा निर्मिता अक्षया जन्मपत्री अस्ति।

विषयेऽस्मिन् डब्ल्यु-जी.-बेन्हम-महोदयेन लिखितम् - ''गर्भे जीव: क्रियाशील: न भवति। यदा गर्भात् बहि: आगच्छति, तत्क्षणेनैव रक्तसंचालनेन शरीरे प्रभाव: भवति। सर्वप्रथमं हस्तयो:, येन शिशो: मुष्टय: अनन्तरं मस्तिष्केन जीवनशक्ते: प्रभावे करतले गते हस्तरेखा: निर्मीयन्ते, यासां कालान्तरे विकास: भवति।''

अर्थात् हस्तं तु शरीरस्य प्रथम: क्रियाशीलमङ्ग: वर्तते। अस्याध्ययनमावश्यकं वर्तते यतोहि प्राचीनमते अस्य व्यवहारिकं महत्त्वमस्ति।

(ग) हस्ते सर्वेषां देवानां निवास:

मेघविजयगणि विदुषा पाङ्गुलीदेवीं हस्ते विराजितां मत्वा तस्या: साधनाविधिमन्त्र स्वग्रन्थे 'हस्तसञ्जीवने' उक्तम् -

''पाङ्गुलीर्महादेवी श्रीसीमाधरशासने।
अधिष्ठात्री करस्यासौ शक्ति: श्रीत्रिदशेशितु:।।''

मन्त्र: - ऊँ नमो पाङ्गुली पाङ्गुली ..... ऊँ ह: ह: ह: ह: स्वाहा।''

(घ) पाङ्गुल्या: देव्या: साधना:

साधनाविधि: -

कार्तिकमासे हस्तनक्षत्रे दिवसे शुभमुहूर्त्ते देवीं षोडशोपचारेण पूजयित्वा 108 वारं मन्त्रस्य आवृत्तिं कुर्यात्। पमेवाभि: आहुतिं दद्यात्। ईदृशं प्रतिदिनं कृत्वा यदा मार्गशीर्षे हस्तनक्षत्रं स्यात् तदा विधानने शान्तिं कुर्यात्। पूर्णब्रह्मचर्यं व्रतं पालयित्वा मन्त्रमिदं सिद्ध्यति।

अस्मात्परं प्राय: धर्मशास्त्रीयकर्मकाण्डीयप्राचीनग्रन्थेषु वापि यथा 'आचार-प्रदीप'- 'आह्निकसूत्रावली' इत्यादिषु कथितम्। ब्राह्मेर्मुहूर्त्ते उत्थाय सर्वप्रथमं हस्तदर्शनं कर्तव्यम्। यतो हि हस्तस्य अग्रभागे लक्ष्म्या:, करमध्ये सरस्वत्या: हस्तस्य मूले च ब्रह्मदेवस्य निवास: अस्ति।

''कराग्रे वसते लक्ष्मी करमध्ये सरस्वती।
करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम्।।''

केचन अन्ये विद्वांस: इदं मतं स्वीकृत्य कथयन्ति यत् धर्मार्थकाममोक्षस्वरूपस्य ब्रह्मण: स्थानं करमूलेऽस्ति तथा च हस्ते आधिभौतिकाधिदैविकाध्यात्मिकरूपेषु लक्ष्मीसरस्वतीविष्णुदेवानां स्थिति: भवति।

आधुनिकविचारका: हस्तस्याग्रभागं पदार्थवाचकं तथा च अन्यभागं यथार्थवाचकं (भौतिकतत्त्वज्ञानबोधकं) स्त:। कथनस्य तात्पर्यमस्ति विद्वांस: स्वस्वग्रन्थेषु स्वधर्मानुसारं देवान् जयन्ति। प्रभाते हस्तदर्शनेन देवदर्शनेन वा पुण्यसिद्धि: भवति।

2. प्रकरणम् (पुण्यसाधनं न्यासविधि: हस्तदर्शनरीतिश्च)

(क) हस्ते सर्वेषां तीर्थानां निवास:

''मूलेऽङ्गुष्ठस्य स्याद् ब्राहम्यं तीर्थं कायं कनिष्ठयो:।
पित्र्यं तर्जन्यङ्गुष्ठान्तर्दैवतं त्वङ्गुलीमुखे।।''

सम्बन्धेऽस्मिन् स्मृतिकार: मनुरपि लिखति

''अङ्गुष्ठस्य तले ब्राह्मतीर्थं प्रचक्षते।
कायमङ्गुलिमूलेऽग्रे दैवं पैत्र्यं ज्ञयो: अध:।।''

अर्थात् अङ्गुष्ठस्य मूले ब्राह्मतीर्थं, कनिष्ठाया: मूले कायतीर्थं अङ्गुलीनामग्रभागेषु दैवतीर्थं तर्जन्यङ्गुष्ठयोश्च मध्ये पितृतीर्थ भवति। अत एव प्रत्येकं मन्त्रस्य जपात् पूर्वे करन्यासमनिवार्यमस्ति।

''शत्रुभ्यस्तु तर्जन्यां मध्यमायां जयन्तक:।
अर्बुद: खलु सावित्र्यां कनिष्ठायां स्यमन्तक:।।
अङ्गुष्ठेऽष्टापदगिरि: पतीर्थान्यनुक्रमात्।
स्वहस्तदर्शनेनैव वन्द्यन्ते प्रातरुत्तमै:।।''

अनेन प्रकारेण मनुष्य: हस्तदर्शनेन अनायासेन सर्वदेवतीर्थानां दर्शनं करोति। श्लोकेऽस्मिन् पतीर्थानि वर्णयन्ते।

संस्कृत शिक्षिका, दिल्ली सरकार

सत्य सपथ करुणानिधान की

रामशंकर गौड

गोस्वामी तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' भारतीय संस्कृति का एक ऐसा अनूठा ग्रन्थ है जिसके गागर में सागर भरा गया है। यह वह ग्रन्थ है जिस पर अनेकों शोध ग्रन्थ लिखे गये हैं अनेक साहित्य मनीषियों एवं सन्तों ने इसके अमूल्य रत्नों को खोजकर जन मानस के सन्मुख उजागर किये हैं।

ऐसा ही एक प्रसंग सुन्दरकाण्ड में भी उपस्थित हुआ है। अंजनी सुत श्री हनुमान जी सीता जी की खोज के लिए भेजे गये हैं वे लंका में गुप्त रूप से रखी गई सीता जी के स्थल अशोक वाटिका में पहुँच गये हैं। रावण द्वारा सीता की प्रतारणा दुःखपूर्वक मौन होकर सुनते हैं, **'तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई'** क्योंकि उन्हें राम का सन्देश सीता जी को देना था। सीता जी द्वारा त्रिजटा से आत्मदाह (रावण के भय से नहीं राम के विरह के कारण) की इच्छा को त्रिजटा कैसे पूर्ति करती? अत्यन्त विरहाकुल सीता की दशा कपीश से नहीं देखी गई। उचित समय देखकर उन्होंने सीता जी की ओर मुद्रिका डाल दी। **कपि करि हृदयं विचार दीन्हिं मुद्रिका डज़रि तब (सुन्दर. 12)**

राम नाम अंकित उस मुदरी को सीता जी कैसे नहीं पहचानती। राम की ओर से उन्हें दी गई यह अंगूठी विवाह की सौगात थी। वनवास के समय राम ने तो सभी आभूषण त्याग दिये थे। किन्तु गुरु वसिष्ठ ने सीता को ऐसा करने से मना कर दिया था। फलतः वे सुहाग के आभूषणों सहित वनवास में आई थी। केवट को नदी पार की उतराई देने के समय राम के संकोच को देख उन्होंने यही मुद्रिका केवट को देने को दी थी जो केवट ने स्वीकार नहीं की थी। सम्भवतः यह तभी से राम के पास थी अथवा रावण द्वारा हरण होने पर सुग्रीवादि वानरों को देखकर आकाश मार्ग से आभूषणों की पोटली में डाल दी थी।

लंका में उस अंगूठी को देखकर उनका हृदयय हर्षित भ हुआ और विषादित भी। अंगूठी को पहचानकर राम नाम पढ़ कर हर्षित होना स्वाभाविक था। विषाद इसलिए कि क्या किसी ने अजय राम को जीतकर अंगूठी प्राप्त कर ली है। या कहीं राक्षसों ने माया से तो नहीं बना ली। किन्तु इन दोनों बातों के प्रति उनके हृदय ने ही प्रत्युत्तर दे दिया था। जीत को सकल अजय रघुराही माया तो असि रचि नहीं जाई। (सुन्दर 1/13)

सीता को इस किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति से उबारने के लिये मधुर स्वर में हनुमान जी श्री राम के गुणानुवाद करने लगे। जब सीता ने मनोयोग से उसे सुनना शुरू किया तो हनुमान जी ने राम जन्म से

सीता हरण तक की घटनाएँ ब्यारेवार सुनाई। सीता जी के आग्रह पर हनुमान प्रकट तो हुए किन्तु उन्हें देखकर विस्मय से वे मुँह मोड कर बैठ गई। इस विस्मय के कारण थे एक साधारण सा वानर एवं वह भी लंका में। वह भी अपने को राम का दूत कह रहा है। पर उस पर विश्वास कैसे करे, क्या पता कोई रावन का दूत हो? इस बहाने फुसलाने आया हो। या और अन्यान्द कारणों से विश्वास नहीं कर पा रही थी सीता। तब उदधिक्रमण (हनुमान का एक नाम) ने कहा– ''राम दूत मैं मातु जानकी सत्य सपथ करुणा निधान की।'' (वही 5/13)

अब सीता को विश्वास हो गया, ऐसा क्या था और कौनसा शब्द 'सत्य सपथ' , फिर 'करुणा निधा' हाँ यही वह शब्द था जिसने जानकी को लगा कि यह कृपासिन्धु राम का दास है। हम लोग अपने दाम्पत्य जीवन में पति पत्नी को और पत्नी पति को कोई सम्बोधन से सम्बन्धित करती हैं। प्रायः पतियों के नाम पत्नियाँ नहीं लेती, इसे लज्जा कहें या पति की उम्र कम हो जाने का विश्वास, इसलिये कोई नामांकन होना हो जाता है। बच्चे हो जाने के बाद अमुक के पिताजी का सम्बोधन तो आम है ही पर उससे पूर्व प्रिय, पियतम, डार्लिंग साहब आदि नाम से इंगित करना होता है। 'मानस' में मैथिली ने प्रायः प्राणपति, प्राणनाथ, प्रभु विशेषतः नाम सम्बोधन से रघुवर को सम्बोधित किया है परन्तु ऐसा ही एक निजत्व सम्बोधन सीताजी ने रामचन्द्र जी के लिए चुना हुआ था और वह था 'करुणा-निधान' सत्य सपथ करूणा निधा मानो प्रतीति कर गया हो। जब राम ने अंगूठी दी तो हनुमान को अलग ले जाकर यह भी कहा था, तुम्हें देखकर या तुम्हारी बातों से सीता पर प्रभाव नहीं पडेगा। उनमें विश्वास जगाने के लिए हम दौनों के गुप्त नाम को प्रकट करना ही पडेगा और यह नाम था करुणाप निधा। अब देखें कि सीता ने यह नाम कहाँ से पाया? मिथलेश कुमारी जानकी ने पुष्प वाटिका में राजकुंवर राम को देखा सीता को लगा ये ही मेरे पति होने के सर्वथा योग्य हैं। इसलिये उन्होंने तत्काल अपनी कुलदेवी पार्वती से प्रार्थना की देखिये बालकाण्ड में–

जय जय गिरिवर राज किशोरी, जय महेश मुख चंद चकोरी। (बाल. 3/235)

आज भी विवाह हेतु योग्य वर के लिए कन्याएँ पार्वती माता को ही मनाती है। सीता भी शिव विवाह को स्मृत करती है। गौरी मनाती है, गणेश और षडानन की माता जगत जननी से राम को पति रूप में पाने की प्रार्थना करती है। 'मोर मनुरथु जानहू नीकें'' कहकर वे उनके पैर पकड लेती हैं। इसी से भवानी द्रवित होती है जैसे कहती है– 'सुन सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।। (वही 4/236)'। तुम्हें मन चाहा वर प्राप्त होगा।

मनवांछित वर का वरदान– मनु जाहिं राचउ मिलिहिं सो बरु सहज सुन्दर साँवरो, करूणा निधान सुजान सीलु सनेह जानत रावरो।। वह भी तेरे मन में जो प्रेम है वह जानता है शीलवान सुजान वह

करुणा निधान है। भवानी माता के द्वारा दिये गये उस सम्बोधन को सीता ने तभी से ग्रहण कर लिया था। तभी वहाँ उस एकान्तिक विरह पीडादग्ध सीता को एक अजनबी का 'करूणा निधा' सम्बोधन विश्वास पैदा कर गया।

इस संकल्प का द्वन्द रूप में पुरावृति की हुई है। रावण दर्पहा (हनुमानजी का नाम) राम को लंका से लौटकर सीता जी की ओर से दिया चिह्न 'चूडामणि' दे रहे हैं और वहीं विरहदवध रमणी का सन्देश भी– अश्रुसिंचत दोनों नेत्रों से सीता की मार्मिक पुकार किसी भी काव्य साहित्य का अनुपम उदाहरण है–

अवगुन एक मोर मैं माना। विद्युरत प्रान न कीन्ह पयाना।
नाथ सो नयनाहि को अपाधा। निसरत प्रान करहिं हठि बाधा।।
विरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वाय जारह छन महिं सरीरा।।
नयन स्रवहिं जलु निज हित लागी। जरैं न पाव देह बिहरागी। (सुन्दर 3-4/3-11)

फिर सीतान्वेषक हनुमान राम में वही भाव जगाने के लिये वैसे ही शब्दों का प्रयोग करते हैं करूणा निधान तो नहीं कहते मगर कहते हैं–

निमिष निमिष करूणा निधि जाहिं कल्प सम बीति।
बेगी चलिअ प्रभु आनिऊ भुज बल खल दल जीति।। (सुन्दरकाण्ड 31)

विवशता

नवीन जोशी

माँ तुम मेरे बगैर सोने की आदत डाल लो तो अच्छा है,
दुनिया के सामने मत रोना खुद को संभाल लो तो अच्छा है।
जब निकलूं घर का ख्याल न हो इतनी भी ग्वार न थी,
मेरा कुसूर बस इतना था मैं बलात्कार करवाने को तैयार न थी।
अब गाँव-शहरों में खूब मोमबत्तियां बेची जाएगीं,
और न जाने और कितनी प्रियकांएँ नौंची जाएगीं।
इस अपंग समाज में खुद को ढाल़ लो तो अच्छा है।

माँ तुम मेरे बगैर सोने की आदत डाल लो तो अच्छा है।
कुछ दिनों तक टेलीविजनों पर लंबे-लंबे भाषण सुनाएगें,
कुछ नेताओं के हाथों से कागज के टुकड़ें फेंके जाएंगे।
इनको सजा होने तक न जानें कितनी बेटियाँ जल जाएगीं,
ये सड़कों वाली मोमबत्तियां शयनकक्षों में सज जाएगीं।
आवाज मत उठाना सरकार से माल लो तो अच्छा है।

माँ तुम मेरे बगैर सोने की आदत डाल लो तो अच्छा है।
इनकी चुप्पी देखकर ये इंसान नहीं लकड़ी के खूँटे लगतें हैं,
ये बेटी बचाने-पढ़ाने वाले सारे नारे झूठे लगतें हैं।
तुम क्यों झूठी दिखावटी-मिलावटी शान की बात करते हो,
इन ओंछी हरकतों से ऊँचे हिन्दुस्तान की बात करते हो?
मेरी मौत पर यदि तुम्हें कोई मलाल न हो तो अच्छा है।

माँ तुम मेरे बगैर सोने की आदत डाल लो तो अच्छा है।

शोध छात्र, पद्मश्री नारायणदास रामानन्ददर्शन अध्ययन एवं शोध संस्थान, जयपुर

जाडन स्कूल
जाडन, जिला पाली, राजस्थान, भारत

श्री विश्वदीप गुरुकुल
माध्यमिक विद्यालय (जाडन स्कूल)
ॐ विश्वदीप गुरुकुल स्वामी महेश्वरानन्द आश्रम शिक्षा एवं शोध संस्थान का हिस्सा है जो राजस्थान के जाडन गाँव में स्थित हैं।
रेगिस्तानी भाग होने के कारण यहाँ सामान्य जीवन बहुत कठिन है। यहाँ के ज्यादातर परिवार अपने बच्चों को, खासकर लडकियों को, पढाई के लिये नहीं भेजते हैं।
ऐसी परिस्थितियों को देखकर सन् २००२ में श्री परमहंस स्वामी महेश्वरानन्द पुरी जी ने यह गुरुकुल स्थापित किया। प्रारंभ में यह गुरुकुल १४६ बच्चों से शुरु किया गया और अभी २०१४ में १२०० छात्र शिक्षा प्राप्त कर रहें हैं। यहाँ पर ५ साल से १५ साल तक के बच्चे K.G. से लेकर १२वीं तक की शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

ज्ञानपुत्र योजना
आश्रम में १९९८ से ज्ञानपुत्र छात्रवृति योजना चलायी गयी है। यह गरीब विद्यार्थीयों को वित्तीय सहायता प्रदान करवाता है। गाँव के सरपंच और विद्यालय के प्रधानाचार्य द्वारा इन बच्चों का चयन किया जाता हैं।
छात्रावास
उत्तर पश्चिम कोने में स्वास्तिक के आकार का भवन है जो १५० विद्यार्थीयों को रहने की सुविधा प्रदान करवाता है जो देश विदेश से यहाँ पर योग के विभिन्न सेमिनार और डिप्लोमा कोर्स के लिये आते हैं।
COLLEGE BUS

जाडन स्कूल
ॐ विश्व दीप गुरुकुल
स्वामी महेश्वरानन्द आश्रम
शिक्षा एवं शोध संस्थान
३०६ ४०१ जाडन, जिला पाली, राजस्थान, भारत
दुरभाष: +९१-२९३५-२७४-०३५, ++९१-२९३५-२७४-०७१
मोबाईल: +९१ ९०० १२९५ १३१
फैक्स: ++९१-२९३५-२७४-००८
वैब: www.omashram.com
ई-मेल: info@omashram.com

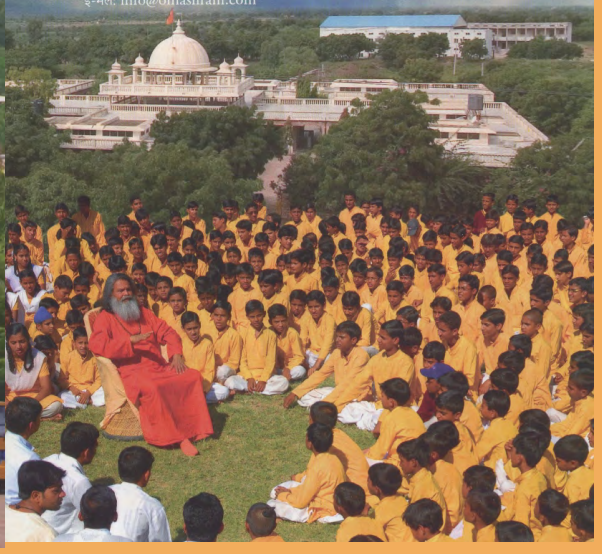

महाकवि कालिदास जयंती के पावन पर्व पर दिनांक 24 नवम्बर, 2019 को आयोजित व्याख्यानमाला

प्रकाशक : **विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान,** कीर्ति नगर, श्याम नगर, सोढाला, जयपुर
Mail Id. : vishwagurudeepashram@gmail.com • jaipur@yogaindailylife.org
Website : https://www.vgda.in • Youtube : www.youtube.com/c/vishwagurdeepashram

Narayan